ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-8 No. 3 August 2020

योगवासिष्ठ में मोक्ष अवधारणा

डॉ. सोमवीर आर्य
सहायक आचार्य (योग विभाग)
जे.जे.टी. यूनिवर्सिटी झून्झूनु , राजस्थान

धर्मबीर यादव
शोधार्थी
जे.जे.टी. यूनिवर्सिटी झून्झूनु , राजस्थान

शोध सारांश–

वेद, उपनिषद, पुराण आदि आर्ष ग्रन्थों में शास्त्रकारों ने जीवन के चार प्रमुख उद्देश्य बतलाए हैं– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। जिन्हे भारतीय सनातन परम्परा में पुरूषार्थ चतुष्य कहा जाता हैं। विभिन्न परम्पराओं के सभी धर्म ग्रन्थों में जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति बतलाया है। सांख्य दर्शन में बताया गया हैं कि तीन प्रकार के तापों या दुःखों– आधिदैहिक(आध्यात्मिक), आधिभौतिक एवं आधिदैविक से सामना सभी को अपने जीवन में करना पड़ता हैं। इन तीन प्रकार के दुःखो का समूल नाश या छुटकारा ही मुक्ति या मोक्ष हैं। न्याय दर्शन में भी इक्कीस प्रकार के दुःखों से छुटकारा पाने को ही मोक्ष कहा हैं। वेदान्त दर्शन के अनसार आत्मज्ञान प्राप्त करके ब्रह्म स्वरूप का बोध हो जाने को ही मोक्ष कहा गया हैं। उपर्युक्त सभी धर्म ग्रन्थों एवं दर्शनों के आधार पर कहा जा सकता हैं कि सभी प्रकार के सुख–दुःख, मोह–माया, राग–द्वेष, कर्म, क्लेश आदि पर साधना के द्वारा विजय प्राप्त कर लेना ही मोक्ष प्राप्ति हैं।

प्रस्तावना–

भारतीय सनातन परम्परा में मोक्ष शब्द के अनेक पर्यायवाची शब्द हैं, जैसे–मुक्ति, कैवल्य, निर्वाण, समाधि, परधाम, परमपद, अपवर्ग, सद्गति आदि। विभिन्न संदर्भो में एवं अलग–अलग ग्रन्थों में इन सभी शब्दों का प्रयोग मोक्ष के लिए ही किया जाता हैं। सभी मोक्षदायक ग्रन्थों में बताया गया हैं कि कर्मो के अनुसार मनुष्य का जन्म होता रहता है। जन्म हुआ मृत्यु हुई, फिर अगला जन्म हुआ फिर मृत्यु हुई। इस प्रकार जन्म–मृत्यु की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती हैं भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा हैं कि आत्मा निरन्तर शरीर बदलती रहती हैं, जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर, नए वस्त्र धारण कर लेता हैं ऐसे ही आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नया शरीर धारण कर लेती हैं। साधना, अभ्यास, वैराग्य आदि के द्वारा बार–बार जन्म लेने की प्रक्रिया पर पूर्णतः विराम लगा देना ही मोक्ष हैं। दूसरे शब्दों में कहे तो जीव का बार–बार जन्म और मरण की अवस्था से या बन्धन से घुटने को ही मोक्ष कहा जाता हैं। मोक्ष प्राप्त होने पर इस भौतिक संसार में पुनः जन्म नहीं होता हैं।

संसार के चार बीज एवं मोक्ष का प्रतिपादन–

योगवासिष्ठ ग्रन्थ के अन्तिम प्रकरण का नाम ही निर्वाण प्रकरण हैं। यह योगवासिष्ठ ग्रन्थ का सबसे बड़ा प्रकरण या अध्याय हैं। इसलिए इसे पूर्वार्ध एंव उत्तरार्ध नाम से दो भागों में बाँटा गया हैं। इस निर्वाण

Copyright @ 2020 Authors

प्रकरण में महर्षि वासिष्ठ ने विभिन्न दृष्टांतो एंव उदाहरणों के माध्यम से निर्वाण या मोक्ष प्राप्ति के मार्ग को विस्तार से बताया हैं। निर्वाण–प्रकरण के उत्तरार्ध में तो महर्षि वासिष्ठ ने मोक्ष के गूढतम रहस्यों का प्रतिपादन किया हैं।

निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध के चौबीसवें सर्ग में भौतिक संसार के विनाश रूप का वर्णन करते हुए मंकि मुनि ने महर्षि वासिष्ठ से उनसे पार जाने के उपाय बताने का निवेदन किया। क्योंकि संसार के बीजों के विनाश के बिना मोक्ष प्राप्त नहीं किया जा सकता हैं। इन्ही संसार के बीजों का उपदेश महर्षि वासिष्ठ इस प्रकरण में मंकि मुनि को देते हुए कहते हैं, हे मुने! संवेदन, भावन, वासना और कलना ये चार बीज ही इस जगत् में अनर्थ पैदा करते हैं। ये सब मिथ्या होने के कारण निष्प्रयोजन हैं और अविद्या से ही इनका विस्तार होता हैं। इसके बाद महर्षि वासिष्ठ इन चारों बीजों को विस्तार से समझाते हैं–

1. **संवेदन–** यह पहला बाधक बीज हैं। पाँचो इन्द्रियों के द्वारा अपने–अपने विषयों का उपभोग होता हैं। इन्द्रियों के द्वारा विषयों के उपभोग को ही संवेदन कहा गया हैं।
2. **भावन–** यह दूसरा बाधक बीज हैं। इन्द्रियों के द्वारा विषयों को जानने के बाद, मन में बार–बार जानने की जो मन में लालसा या चिंतन होता हैं उसे ही भावन कहते हैं।
3. **वासना–** किसी भी विषय का बार–बार चिन्तन करने से चित्त में विषयों के दृढं संस्कार संचित हो जाते है, इसे ही वासना कहते हैं। यह तीसरा बाधक बीज हैं।
4. **कलना–** यह सबसे अन्तिम अर्थात् चौथा बाधक बीज हैं। चित्त में वासनाओं का संग्रहण होता हैं। इसी वासना के कारण मृत्यु के समय भावी शरीर को प्राप्ति के लिए चित में जो वासनामय स्मृति होती है, उसे ही कलना कहा जाता हैं।

उपर्युक्त संसार के चारों बीजो में प्रारम्भिक दो संवेदन और भावन अत्यन्त अनर्थ रूप हैं और अन्तिम दो वासना और कलना प्रारम्भिक दोनों के पीछे चलने के कारण अनर्थ रूप हैं। वेदन और भावन ये दोनों बीज समस्त दोषों के आश्रयस्थल हैं। इन दोनो की तुलना में भावन में तो सभी आपत्तियों का निवास स्थान हैं, जिस प्रकार बसंत ऋतु में पुष्प, फूल, फल आदि से लताएँ रसपूर्वक भरी रहती हैं।

यह भौतिक जगत् बहुत गहन हैं। इस भौतिक संसार में वासनायुक्त होकर चलने वाले जीव के उपर चित्र–विचित्र परिणाम वाले टेढे–मेढ़े अनेक वृतान्त या घटना चक्र आते रहते हैं। इसलिए विवेकशील पुरूष विषयों में दोष भावना और ब्रह्म भावना से इन चारों बीजों को समूल नष्ट कर देता हैं। वासना के नष्ट हो जाने पर स्वतः ही जगत् की भी कोई सत्ता नही रहती हैं अर्थात् मोक्ष प्राप्त हो जाता हैं।

अह्म भाव एवं मोक्ष–

निर्वाण प्रकरण के उत्तरार्ध में तीसवें सर्ग में अहम् भाव को मोक्ष प्राप्ति में सबसे बड़ा बाधक बताया हैं। अहम् भाव के परित्याग के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती हैं। महर्षि वासिष्ठ जी कहते है, हे श्रीराम!

 Copyright @ 2020 Authors

अहम् भाव ही सबसे बड़ी अविद्या हैं। इसी से ही मोक्ष प्राप्ति का मार्ग अवरूद्ध होता हैं। मूर्ख या अज्ञानी लोग पागलों की चेष्टा की तरह अविद्या के कारण मोक्ष प्राप्ति की खोज में लगे रहते हैं। अज्ञान से उत्पन्न होने वाला अंहकार ही अज्ञान का या अविद्या का परिचायक होता हैं। जो पुरूष तत्वज्ञानी है उसे न ममता और न ही अहन्ता रहती हैं। इसलिए श्रीराम इस अंहकार रूपी मल का सर्वथा त्याग करके आकाश की तरह निर्मल तथा मुक्त हुआ ज्ञानी पुरूष शून्य में स्थित रहता हैं, फिर चाहे उसका शरीर रहे या न रहे।

जो तत्वज्ञानी पुरूष हैं उनकी वासना वासना नहीं रहती है, क्योंकि वे निर्माण स्वरूप बन गए हैं। जो पदार्थ संकल्प से सिद्ध होते है, वे सभी संकल्प से ही नष्ट भी होते हैं। जहाँ संकल्प का अभाव हैं वही मोक्ष की प्राप्ति संभव हैं। इस प्रकार अंहकार के नष्ट होने से मन ब्रह्म भाव में स्थित हो जाता हैं। मन की इसी अवस्था को विद्वानों के द्वारा एवं श्रुतियों में मोक्ष कहा जाता हैं। शास्त्रों में दृढ़ विश्वास करके, जगत और अंहकार दोनों मिथ्या हैं, इसको जानकर, सभी भौतिक पदार्थो से आसक्ति शून्य होकर जो तत्वज्ञानी ब्रह्म की शरण में जाता हैं उसी की मुक्ति संभव हैं। इसके अतिरिक्त मुक्ति प्राप्त करने के अन्य सभी मार्ग व्यर्थ हैं।

निर्वाण की स्थिति का वर्णन–

निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध के इक्तीसवें सर्ग में महर्षि वासिष्ठ ने तत्वज्ञानी की निर्वाण प्राप्ति की स्थिति का स्पष्ट वर्णन किया हैं। महर्षि वासिष्ठ कहते हैं हे रामचन्द्र जो भी वस्तु या अवस्तु की भावना की जाती है तत्काल ही उस वस्तु या पदार्थ का चिदाभास में अनुभव होने लग जाता हैं। यह सम्पूर्ण जगत् चैतन्य शक्ति का ही काल्पनिक रंग, रूप व आकार हैं। चिति से भिन्न कुछ भी नहीं हैं। ऐसे ही ब्रह्मा के अतिरिक्त न नाश है, न अस्तित्व हैं, न अनर्थ है, न जन्म है, न मरण है, न आकाश है और न ही नानात्व है। लेकिन अधिष्ठान रूप में सर्वे सर्वा एकमात्र ब्रह्मा ही हैं। ब्रह्मा के अतिरिक्त इस जगत् में सब कुछ निरर्थक हैं अर्थात् कुछ भी नहीं हैं।

श्रीराम! अज्ञानी पुरूष तो भौतिक जगत् में वासनारूप ही हैं। यदि तत्व दृष्टि से विचार किया जाए तो वासना को कोई अस्तित्व ही नहीं हैं। किन्तु कोई भी वासना के वास्तविक स्वरूप पर विचार नहीं करता हैं, इसी कारण इस संसार की उत्पति हुई हैं। आगे महर्षि वासिष्ठ जी कहते है, हे श्रीराम! आप सब कुछ छोड़कर केवल आकाश के समान निर्मल आत्मा की ही उपासना कीजिए। अतः सप्त भूमिकाओं के अभ्यास के द्वारा सांसारिक विषयों को विस्तृत कर देना ही मुमुक्षु पुरूषों का परम कर्तव्य हैं।

ब्राह्य जगत् में जो भी कुछ दिखाई दे रहा है ये सब ब्रह्मा ही हैं, ऐसा ज्ञान हो जाने पर तत्वज्ञानी पुरूष के आचरण या व्यवहार में शांतरूपता अथवा राग–द्वेष शून्य व्यवहार दोनों स्पष्ट नजर आते हैं अथवा जो निर्वाण रूप सप्त भूमिकाओं में पहुँच चुका हैं, उस तत्वज्ञानी की शान्तरूपता ही शेष रह जाती हैं, क्योंकि वह तत्वज्ञानी वासनाओं पर पूर्णतः विजय प्राप्त कर लेता हैं। यदि जब तक ज्ञानी का निर्वाण सुदृढ़ नहीं

 Copyright @ 2020 Authors

होता है, तब तक वह राग, द्वेष, भय के उदय से रहित होकर ही वह व्यवहार करता हैं। किन्तु सप्त भूमिकाओं को प्राप्त हुआ ज्ञानी राग, द्वेष, भय, क्रोध आदि विकार सर्वथा मुक्त हो जाता हैं तथा वह मुनि पत्थर या शिला न होते हुए भी शिला की तरह नित्य निश्चल रूप में स्थिर रहता हैं। इसलिए हे श्रीराम! अंहकार को छोड़कर भय, लोभ, मान, मोह, शरीर, मन, इन्द्रिय, जड़ता से शून्य, शांत समस्त भेदों से रहित अविनाशी, निर्वाण स्वरूप केवल ब्रह्मा के साथ ही एकाकार रहना ही आपके लिए उपर्युक्त हैं, अन्य किसी भी व्यवहारिक विषयों में आपका संलिप्त रहना उचित नहीं हैं।

मोक्ष की स्वाधीनता–

निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध के बतीसवें सर्ग में महर्षि वासिष्ठ ने बताया हैं कि मोक्ष स्वाधीन हैं, पराधीन नहीं हैं। मोक्ष की इच्छा रखने वालो के लिए महर्षि वासिष्ठ जी सबसे पहले अविद्या से चित का विस्तार और फिर उसी से मोक्ष की स्वाधीनता का मार्ग दिखलाते हैं।

महर्षि वासिष्ठ कहते हैं, हे भद्र! अविद्या के कारण चितिशक्ति अर्थात् चैतन्य शक्ति में स्पंदन होता है जिससे अहम् भाव रूप जगत् का मिथ्या भ्रम पैदा हो जाता हैं। किन्तु इसी स्थिति में भी यदि ब्रह्मरूपता का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाए तो किसी भी प्रकार का दुःख नही होगा। यदि इसमें सांसारिक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हैं तो दुःख अवश्य ही होगा। जिस प्रकार आँखे चहल–पहल के कारण विभिन्न रूपों का अनुभव करती हैं, वैसे ही चिति की चंचलता से ही जगत् का मिथ्या भम्र पैदा होता हैं।

चिति शक्ति (चैतन्य शक्ति) स्वभाव से ही सत्यस्वरूप होती है। अतः चिति शक्ति का विषयों की और झुकना व्यर्थ ही होता हैं, क्योंकि विषयों की तो सत्यस्वरूपता होती ही नहीं हैं। ऐसी स्थिति में चिति शक्ति का असत् विषयों की और आकर्षित होना संभव ही नहीं हैं। निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता हैं कि सभी प्रकार की विषयों तीनों कालो में अपनी कोई स्वतंत्रता नहीं होती है, इसी अज्ञान के कारण चिति की विषयों की और आसक्ति होती हैं और जब ज्ञान हो जाता हैं तो विषयों से अनासक्ति हो जाती हैं।

जब स्वंय के अनुभव से अहम भाव का ज्ञान होने लग जाता हैं, तब उसे पता चलता हैं कि अहं भाव ही दुःख का कारण हैं और जब अहं भाव का ज्ञान नहीं होता हैं तो दुःख का कोई कारण भी नजर नहीं आता हैं। इससे स्पष्ट होता हैं कि बन्धन और मुक्ति स्वंय के ही अधीन होती हैं।

आगे महर्षि वासिष्ठ मोक्ष में स्वाधीनता का उत्पादन करते हुए कहते हैं कि विद्या या ज्ञान से अन्दर की शुद्धि हो जाने के बाद आत्मा का परमात्मा के साथ एकरस हो जाने के कारण मन, बुद्धि आदि की पाषाण के समान निर्मुक्त स्थिति हो जाती हैं, यही स्थिति साधक की प्रगाढ़ ध्यान व समाधि की कहलाती है। जो पुरूष बहिर्मुख प्रवृति का हैं वह असत् दुःख का निवारण नहीं कर सकता हैं परन्तु जिस पुरूष की प्रवृति अन्तर्मुखी हैं, वह पुरूष प्रारब्ध से प्राप्त दुःखों को सहन करते हुए अपने आनन्द में आनन्दित रहता हैं।

वासना शमन से मोक्ष–

 Copyright @ 2020 Authors

वासनामय पुरूष दुःख को उसी प्रकार अनुभव करता हैं जिस प्रकार संकल्प से रचित काल्पनिक रूपालोक का। लेकिन जिस पुरूष ने वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली हैं उसे किसी भी प्रकार के दुःख का सामना नहीं करना पड़ता हैं। अतः वासनाओं के बढने से जैसे जगत् का अनुभव होता है, वैसे ही वासनाओं के शमन होने से मुक्ति का अनुभव सिद्ध होता है।

इसी कड़ी में राम प्रश्न करते हैं कि हे महर्षि! वासनाओं को नष्ट करने के क्या उपाय हैं? इसी प्रश्न के उत्तर में महर्षि वासिष्ठ कहते हैं जिस प्रकार विद्वान महात्माओं के संसर्ग से मूढता क्षीण होकर विद्वता के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं, वैसे ही 'अहं ब्रह्मास्मि' की भावना रखने से वासना का प्रकोप धीरे–धीरे कम होकर मुक्ति में परिवर्तित हो जाता हैं। जिस प्रकार प्रकाश से अन्धकार क्षीण हो जाता हैं, उसी प्रकार तत्वज्ञानी के सत्संग से अहं भाव का जो बन्धन हैं वह तुरन्त नष्ट हो जाता हैं। हे राम! मैं कौन हूँ? यह संसार क्या हैं? जीव कौन है? जीव का क्या स्वरूप हैं? इन सभी प्रश्नों का तथ्यों के साथ तत्वज्ञानी के सानिध्य में रहकर जीवन पर्यन्त विचार करना चाहिए।

आगे महर्षि वासिष्ठ कहते हैं कि तत्वज्ञानी रूपी सूर्य का संग करने से सम्पूर्ण संसार ज्ञान से प्रकाशित हो जाता हैं, सभी पदार्थो का अहं भाव स्वरूप नष्ट हो जाता है। इसलिए श्रीराम तुम्हे तत्वज्ञानी सूर्य की सेवा या संगति करनी चाहिए।[58] मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण में महर्षि वासिष्ठ ने मोक्ष रूपी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए चार द्वारपालो का वर्णन किया हैं। मोक्ष रूपी राज्य के दर पर पहुँचने से पहले चार द्वारपालों को पार करना पड़ेगा। वे चार द्वारपाल हैं–शम, विचार, संतोष और साधु संगम। ये चार ऐसे उपाय हैं जो भौतिक संसार सागर में डूबते हुए जीव के लिए नौका के समान हैं।

मोक्षरूपी इन चारो पहरीयों में संतोष सबसे महत्वपूर्ण हैं, सत्संग गंतव्य या मंजिल तक पहुँचाने वाला उतम साथी हैं, विचार सर्वोतम ज्ञान हैं और शम चरम सुख हैं। महर्षि वासिष्ठ कहते हैं कि मोक्ष की साधना में यदि विशुद्ध प्रकाश वाले इन चारो साधनों में यदि एक ही साधन का ठीक से अभ्यास हो जाए तो शेष तीनों स्वतः ही अभ्यस्त हो जाते हैं। क्योंकि इनमें से प्रत्येक क्रमशः इन चारों की जन्मभूमि है। कबीरदास जी ने भी कहा हैं कि मन को एक ही कार्य पर केन्द्रित करना चाहिए इसी से सारे कार्य सिद्ध हो जाते हैं। अगर मन किसी भी एक कार्य पर नहीं टिक रहा तो कोई भी काम ठीक से नहीं होगा। जिस प्रकार पेड़ की जड़ को सींच लेने के बाद अलग से तने, पतियों व फूलों की पंखुड़ियों को सींचनें की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

निष्कर्ष–

जगत् गुरू वासुदेव जी कहते हैं कि मोक्ष या मुक्ति का अर्थ हैं चक्र को तोड़ना। जिस व्यक्ति ने जीवन को अच्छे से देख लिया है, समझ लिया है, अनुभव कर लिया है, ऐसा व्यक्ति ही जीवन से पार जाना चाहता हैं, अर्थात् जीवन के इस चक्र को तोड़कर सदा के लिए मुक्त होना चाहता हैं।

 Copyright @ 2020 Authors

योगवासिष्ठ में भी महर्षि वासिष्ठ श्रीराम को मोक्ष के बारे में चरणबद्ध तरीके से बताते हैं। वास्तव में योगवासिष्ठ पूरी तरह से सभी प्रकार के मापदण्ड़ों के आधार पर पूर्णतः मोक्षदायक ग्रन्थ ही है। अनेक भारतीय सनातन ग्रन्थों में मोक्ष का वर्णन मिलता हैं। लेकिन योगवासिष्ठ में बहुत ही सरल तरीके से मोक्ष के स्वरूपों को स्पष्ट किया गया हैं।

जो साधक शम्, विचार, संतोष और साधुसंगम इन चारों में से किसी एक की साधना ठीक से कर लेता है तो वह मोक्ष रूपी लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर लेता है फिर उस साधक के लिए अन्य किसी भी प्रकार की साधना करने का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता है।

सन्दर्भ सूची–

1. अथ त्रिविध दुःखात्यन्त निवृतिरत्यन्त पुरूषार्थः (साख्य दर्शन 1.1)
2. गीताप्रैस गोरखपुर, संक्षिप्त योगवासिष्ठ (पृ.473)
3. योगवासिष्ठ, निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध (सर्ग–25, श्लोक–1,2,3)
4. बोधेन्द्र सरस्वती, श्रीयोगवासिष्ठ महारामायण (पृ–1835 से 1839)
5. योगवासिष्ठ, निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध (सर्ग–31, श्लोक–1,3,4,16,23,24,26,27,28,29,37)
6. गीताप्रैस गोरखपुर, संक्षिप्त योगवासिष्ठ (पृ–478,479,480)
7. कपूर डॉ. बदरीनाथ योगवासिष्ठ (पृ–351)
8. बोधेन्द्र सरस्वती, श्रीयोगवासिष्ठ महारामायण (पृ–1844,1845,1846,1847)
9. योगवासिष्ठ निर्वाण प्रकरण उत्तरार्ध सर्ग–32, (श्लोक–1,2,3,6,7,9,10,13,14,15,17,18,19)
10. मोक्षद्वारे द्वारपालश्चत्वारः परिकीर्तिताः।
    शमो विचारः संतोषस् चतुर्थः साधु संगमः।। (मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण, 17.59)
11. संतोषः परमो लाभः सत्संगः परमा गतिः।
    विचारः परमं ज्ञानं शमो हि परम सुखम्।।(2.19)
12. एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।
    'रहिमन' मूलहि सींचिबो, फूलहि फलहि अधाय।। (रहीम के दोहे)
13. श्रीमद्भगवद्गीता
14. सांख्य दर्शन
15. योग दर्शन
16. न्याय दर्शन
17. सांख्य कारिका
18. वेदान्त दर्शन
19. बृहदारण्यक उपनिषद्
20. ऋग्वेद

 Copyright @ 2020 Authors